**ओ३म्**

**‘योगेश्वर श्री कृष्ण, गीता एवं वेद’**

**-मनमोहन आर्य, देहरादून।**

 श्री कृष्ण योगेश्वर थे, महात्मा थे, महावीर, धर्मात्मा व सुदर्शनचक्रधारी थे। वह वेदभक्त, ईश्वरभक्त, देशभक्त, ऋषियो व योगियों के अनुगामी थे। पूज्यों की पूजा व अपूज्यों की अवहेलना व उपेक्षा के साथ उनको दण्डित करते थे। अन्यायकारियों के लिए वह साक्षात काल थे। उन्होंने अपना सारा जीवन वेद धर्म का पालन करके व्यतीत किया। आज से लगभाग पांच हजार से कुछ अधिक वर्ष पूर्व उनका जन्म भारत की मथुरा नगरी में पिता वसुदेव व माता देवकी की कोख से हुआ था। महाभारत युद्ध में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। अनेक धर्म विरोधी व अन्यायकारियों का दमन कर-कराकर उन्होंने साधुओं व सज्जनों की रक्षा की। उनके बताये मार्ग पर न चलने से ही देश की वैदिक सनातन धर्मी जनता पर दुःख-दरिद्रता सहित पराधीनता व विधर्मियों द्वारा उनका व उनकी स्त्रियों का अपमान, शोषण व उन पर अन्याय किया गया। दुर्दिनों का यह सिलसिला चल ही रहा था कि महर्षि दयानन्द का आगमन हुआ। उन्होंने अतीत व स्वर्णिम इतिहास का स्मरण कराया व उन्हीं वैदिक सिद्धान्तों व मान्यताओं का प्रचार व प्रसार किया जो सृष्टि की आदि से आरम्भ परम्पराओं के अनुसार अभीष्ट थी। कृष्ण-जन्माष्टमी पर्व श्री कृष्ण जी का जन्मोत्सव है। इसको मनाते समय हमें उनके सुदर्शनचक्र धारी व वेदों में निष्ठावान स्वरूप को स्मरण कर स्वयं को उनके जैसा बनाने का व्रत लेना चाहिये।

महाभारत में श्रीकृष्ण जी के उपर्युक्त स्वरूप के ही दर्शन होते हैं। यद्यपि मध्यकाल में महाभारत ग्रन्थ में भारी प्रक्षेप हुए हैं परन्तु फिर भी उसमें श्रीकृष्ण जी पर ऐसे घिनौने आरोप नहीं लगाये जैसे परवर्ती मध्यकालीन भागवत व अन्य पुराणों में लगाये गये हैं। इससे हमारा सनातन वैदिक धर्म बदनाम हुआ और विधर्मियों ने इसका लाभ उठाया। धर्मान्तरण में भी कृष्णजी का यह पौराणिक स्वरूप विधर्मियों का सहायक रहा। स्थिति यह थी कि वेदों का पठन पाठन न होने से सर्वत्र अज्ञान का प्रभाव था। स्वार्थी अपने स्वार्थ की सिद्धि में तत्पर थे। उसी की देन यह पुराण ग्रन्थ हैं। सत्य व यथार्थ को विस्मृत कर देने और श्रीकृष्ण जी जैसे महापुरूषों का चरित्र हनन होने से देश व समाज दिन प्रतिदिन पतन की ओर अग्रसर हुए। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में महर्षि दयानन्द जी का प्रादुर्भाव होने पर उन्होंने गुरू विरजानन्द जी से प्राप्त आर्ष दृष्टि से सभी ऐतिहासिक स्थापनाओं की जांच की। गुरु विरजानन्द जी ने उन्हें बताया था कि जिन ग्रन्थों में पूज्य महापुरुषों की निन्दा आदि हो, वह स्वार्थी व अज्ञानी लोगों के बनाये हुए ग्रन्थ होते हैं। पुराणादि ग्रन्थों के रचयिताओं को भाषा का तो ज्ञान था परन्तु वह सत्य ज्ञान व विद्या से कोसों दूर थे। वह हमारे ऋषि-मुनियों के ज्ञान व आचरण के सर्वथा विपरीत दुर्बल विचारों वाले मनुष्य थे। अतः महर्षि दयानन्द ने महाभारत का अध्ययन कर श्रीकृष्ण जी के सत्य चरित को जाना और उसके आधार पर पुराणों में वर्णित श्रीकृष्ण जी पर मिथ्या आरोपों का निराकरण करते हुए सत्य वचनों को प्रस्तुत किया। सत्यार्थप्रकाश के ग्याहरवें समुल्लास में उन्होंने श्रीकृष्ण जी के विषय में जो लिखा है वह प्रत्येक भारतीय के लिए पठनीय है। उसे प्रस्तुत कर रहे हैं।

महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि **‘‘देखो ! श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत (ग्रन्थ) में** **अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरूषों के सदृश है, जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरणपर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा। और इस भागवत वाले (पुराण के रचनाकार ने) ने अनुचित मनमाने दोष (श्रीकृष्णजी पर) लगाये हैं। (उन पर) दूध, दही मक्खन आदि की चोरी लगाई और कुब्जा दासी से समागम, पर स्त्रियों से रासमंडल क्रीड़ा आदि मिथ्या दोष श्रीकृष्ण जी में लगाये हैं। इसको पढ़-पढ़ा, सुन-सुना के अन्य मत वाले श्रीकृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत (पुराण) न होता तो श्रीकृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती?”**

संसार मे धार्मिक ग्रन्थों में **‘‘श्रीमदभवद-गीता”** सबसे अधिक लोकप्रिय ग्रन्थों में से एक है। इस ग्रन्थ की एक विशेषता यह है कि इसे अन्य धर्मों के लोग भी जिज्ञासा, श्रद्धा एवं रूचि से पढ़ते हैं और इसे संसार में उपलब्ध धार्मिक साहित्य सर्वोत्तम मानते हैं। इसका कारण यह है कि इसमें आध्यात्मिक ज्ञान के वह सिद्धान्त, विचार व शिक्षाएं हैं, वह अन्य धर्मों से उत्कृष्ट व सबकी आत्माओं द्वारा सहज रूप से स्वीकार्य होते हैं। अन्य धर्म ग्रन्थों में गीता के समान ईश्वर, जीवात्मा, योग व कर्तव्य सम्बन्धी ज्ञान उपलब्ध नहीं होता। ज्ञातव्य है कि गीता में पद्य शैली में 700 श्लोक हैं। यह महाभारत का अंग है जिसे महर्षि वेदव्यास ने लिखा है। गीता का ऐतिहासिक कथानक महाभारत की युद्ध भूमि में योगेश्वर कृष्ण के मित्र, शिष्य व सखा धनुर्धारी अर्जुन को विषाद होने पर उन्हें दी र्गइं शिक्षायें व ज्ञान है। इस ज्ञान को प्राप्त कर अर्जुन का मोह व विषाद दूर हो गया था और पूरे आत्म विश्वास एवं दृण संकल्प के साथ वह युद्ध करने के लिए समुद्यत हो गये थे। गीता में ईश्वर, जीवात्मा, धर्म, कर्म, यज्ञ, योग, पाप, पुण्य, क्षत्रिय का धर्म आदि नाना विषयों पर अनेक सारगर्भित बातें भी हैं जो इसके मूल वेद, उपनिषद् आदि ग्रन्थों से ली गई हैं परन्तु इसकी विशेषता यह है कि इसमें अनेक बातें बहुत ही सरल व प्रभावशाली रूप में वर्णित हैं जो पाठकों को आकर्षित करती हैं।

मनुष्य जन्म अपने पूर्व जन्मों में किए हुए पाप-पुण्यों का परिणाम है। पिछले जन्म में पुण्य कर्मों की अधिकता के कारण हमें मानव शरीर मिला है। प्रारब्ध के भोग तथा जीवात्मा के अभ्युदय एवं निःश्रेयस अर्थात् कल्याण प्राप्त करने के लिए मनुष्य जन्म ईश्वर के द्वारा मिलता है। वेद विहित कर्मो के आचरण को ही धर्म कहते हैं। इसके विपरीत कर्म पाप या अर्धम कहलाते हैं। गीता में पुण्य कर्मो को करने की प्रेरणा है। अत्याचार व अन्याय को न सहना व उसका विरोध करना पुण्य कर्म है। अन्याय व अधर्म को सहना व उसमें सम्मिलित होना पाप है। कर्तव्य से विमुख होकर जो कार्य व कर्म होते हैं, वह पाप कर्म होते हैं। अर्जुन क्षत्रिय होने पर भी क्षत्रियों के कर्मों का त्याग करने व वैराग्य की बातें करने लगा तो श्री कृष्ण जी ने उसे उसके कर्तव्यों का बोध कराया और जब उसे समझ में आ गया कि उसे अन्याय के विरूद्ध लड़ना है तो उसने युद्ध के लिए कमर कस ली और पूरे मन से अन्त तक डटा रहा। ऐसा ही हम सबको करने की शिक्षा गीता में है। गीता से सभी मनुष्यों को मार्गदर्शन मिलता है। यदि हम गीता पढ़कर भी अपने कर्तव्य को निर्धारित नहीं करते और कर्तव्य पथ पर नही चलते तो गीता का पढ़ना एक प्रकार से निरर्थक तो नहीं परन्तु उपयोगी भी नहीं होगा। जय-पराजय से ऊपर उठ कर युद्ध करना चाहिये। **‘सत्यमेव जयते’** के अनुसार विजय सदा सत्य की होती है परन्तु साथ हि सत्य पक्ष का विजय के लिए पुरूषार्थ भी असत्य पक्ष से कम नहीं होना चाहिये। लक्ष्य की प्राप्ति हेतु नीति से भी काम लेना चाहिये जैसा कि श्री कृष्ण जी व आचार्य चाणक्य ने अपने जीवनों में किया है। महाभारत युद्ध में पाण्डव पक्ष के पास कौरवों से कम शक्ति थी परन्तु कृष्ण जी के परामर्श तथा पाण्डवों व उनके साथी-सहयोगियों के पुरूषार्थ के कारण विजय पाण्डवों को प्राप्त हुई। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि गीता को पढ़कर अनेक वैदिक शिक्षाओं व मान्यताओं का ज्ञान हो जाता है। गीता की कुछ शिक्षायें ऐसी भी हैं जिनसे वैदिक सिद्धान्तों पर पर्याप्त प्रकाश नहीं पड़ता। इनमें से एक सिद्धान्त त्रैतवाद का है जिसके अनुसार ईश्वर, जीव व प्रकृति अनादि, नित्य, अनुत्पन्न, सनातन व शाश्वत हैं। जीव अनादि काल से ईश्वर से पृथक व स्वतन्त्र सत्ता है। जीव व ईश्वर का व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है।

अब वेद क्या है? इस पर दृष्टि डालते हैं। वेद सृष्टि के आरम्भ में अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी ईश्वर द्वारा इन चार आदि ऋषियों की जीवात्माओं के भीतर प्रेरणा द्वारा दिया गया ज्ञान है। ईश्वर आज भी हमें ज्ञान देता है। कोई भी बुरा काम करने पर आत्मा में भय, शंका व लज्जा का पैदा होना ईश्वर की ही प्रेरणा होती है। इसी प्रकार से परोपकार या भलाई का काम करने पर आत्मा निःशंक, उत्साहित व आनन्दित होता है। यह भी ईश्वर की ही प्रेरणा होती है। ईश्वर का उद्देश्य माता-पिता-आचार्य की भांति सृष्टि के आदि में मनुष्यों को शिक्षित करना था। यदि वह ऐसा न करता तो मनुष्य ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते थे और उनरका जीवन ज्ञान के अभाव में निरर्थक ही रहता। परमात्मा द्वारा वेदों के ज्ञान के साथ संस्कृत भाषा का ज्ञान भी दिया गया था। वेदों की भाषा संस्कृत ही ईश्वर की निज भाषा भी ज्ञात होती है। वेदों की संस्कृत भाषा ईश्वर की भाषा होने के कारण इस भाषा व ईश्वरीय ज्ञान को संसार के प्रत्येक मनुष्य को पढ़ना चाहिये। ऐसा करना ही धर्म का पालन, ईश्वर की पूजा व उसकी आज्ञा का पालन करना होगा और इसके विपरीत व्यवहार करना अधर्म व ईश्वर के सच्चे स्वरूप से जानबूझकर अनभिज्ञ रहना होगा जिसमें अल्पज्ञ मनुष्यों व धर्म प्रवर्तकों द्वारा निर्मित धर्म-मत-सम्प्रदायों में धर्म के साथ-साथ, अज्ञान व स्वार्थ के कारण, पाप कर्म भी स्वतः मिश्रित रहेंगे। मृत्यु के पश्चात सभी जीवों के भविष्य का निर्णय उनके कर्मों के आधार पर ही परमात्मा करेगा। वहां किसी मत, पन्थ, धर्म व सम्प्रदाय का कोई गुरू, मतप्रर्वतक व आचार्य सहायक नहीं होगा। इस लिए मनुष्यों को मतों व उनके आचार्यों के चक्र व कुचक्र में फंसना नहीं चाहिये और सत्य मत वेद का अध्ययन कर एक ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानकर उसकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिये। वेदों में सभी सत्य कर्मों वा कर्तव्यों का विधान व असत्य कर्मों का निषेध, सत्य सिद्धान्तों सहित सब सत्य विद्याओं का सूत्र रूप में ज्ञान है। इनका आचरण ही सभी मनुष्यों का धर्म व कर्तव्य है। वेदों में विहित शिक्षाओं के विपरीत कार्य न धर्म हो सकते हैं और न हि कर्तव्य। ईश्वर द्वारा जो वेदों का ज्ञान दिया गया था उसका उद्देश्य समस्त पृथिवी लोक पर सुख शान्ति स्थापित करना था। संसार में जो दुःख व अशान्ति है वह मत-मतान्तरों व उनके अनुयायियों में अल्पज्ञान, स्वार्थ व ज्ञान विरूद्ध आचरण के कारणों से है। उसमें वेदाध्ययन कर ही सुधार हो सकता है और कारण के न रहने पर अशान्ति व दुःख स्वतः दूर हो जायेंगे, यह ध्रुव सत्य है।

ईश्वर से वेदों का ज्ञान मिलने के बाद समय-समय पर आवश्यकतानुसार वेदों के परम विद्वान ऋषियों ने वेदों का तात्पर्य सुगम करने के लिए शिक्षा-व्याकरण-निघण्ट-निरुक्त, ज्योतिष, ब्राह्मण, दर्शन, उपनिषद, स्मृति, गृह्य सूत्र आदि अनेक वैदिक ग्रन्थों का निर्माण किया जो वैदिक साहित्य के नाम से जाने जाते हैं। इनमें से कुछ ग्रन्थों में सम्प्रदायवादियों व मताचारियों ने यत्र-तत्र प्रक्षेप भी किये हैं। अतः वैदिक ग्रन्थों में जो-जो मान्यतायें व सिद्धान्त हैं वह ही सत्य व आचरणीय है। वेद स्वतः प्रमाण है और अन्य सभी ग्रन्थ परतः प्रमाण है। वेद की कोई बात सत्य है? ऐसी शंका होने पर उसका समाधान वेदों के अन्यत्र उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर ही होता है। इसमें युक्ति व तर्क का सहारा भी लिया जा सकता है। गीता का अर्जुन को ज्ञान देने वाले योगेश्वर श्री कृष्ण जी स्वयं वेदों के परमभक्त व वैदिक परम्परा के ऋषि के समान विद्वान, योगी, धर्म रक्षक व क्षात्र धर्म का पालन करने वाले थे। वैदिक साहित्य में यह भी प्रमाण मिलता है कि मोक्ष की अवधि पूरी होने के बाद उनको **‘कृष्ण जी’** के रूप में यह मानव जन्म मिला था। अतः यदि कहीं गीता में भी कोई बात वेद विरूद्ध आती है तो उसके स्थान पर विद्वानों को वैदिक मान्यताओं के प्रकाश में उसका समाधान कर संशोधन कर लेना चाहिये। सत्य सदा सर्वदा एक ही होता है, असत्य कई हो सकते हैं। वेद परम प्रमाण है। मनु जी ने भी कहा है कि **‘धर्म जिज्ञासानाम् प्रमाणं परमं श्रुति।‘** अर्थात् धर्म में यदि कहीं भी कोई शंका व जिज्ञासा उत्पन्न हो तो उसके समाधान के लिए वैदिक मान्यतायें ही परम प्रमाण है।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि योगेश्वर श्रीकृष्ण विश्व इतिहास में आदर्श व श्रेष्ठ पुरूष थे। महाभारत के अन्तर्गत गीता कुछ-कुछ वैदिक मान्यताओं का प्रचारक व प्रसारक ग्रन्थ है। गीता की अधिंकाश मान्यतायें वेदसम्मत हैं। गीता में जहां कहीं कोई बात वेदसंगत व वेदसम्मत न हो तो वहां वैदिक मान्यताओं को ही स्वीकार करना चाहिये। पाठक जब महर्षि दयानन्द प्रणीत सत्यार्थप्रकाश तथा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रन्थों को पढ़ेगे तो उनको वेदों के परम प्रमाण होने व सभी वैदिक सिद्धान्तों का ज्ञान हो जाता है। अतः गीता के पाठकों को सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका एवं वेद अवश्य ही पढ़ने चाहिये अन्यथा उनका ज्ञान अधूरा कहा जायेगा।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**सम्पर्कः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**दूरभाषः 09412985121**